"शासकीय संस्कृत महाविद्यालय ग्वालियर में संरक्षित संस्कृत पाण्डुलिपि सम्पदा"

डॉ. बालकृष्णशर्मा

भारतीय आर्ष मनीषा सदैव ज्ञान-विज्ञान के प्रकाशन एवं संरक्षण के लिए मान्य एवं आदरणीय रही है जिसके परिणामस्वरूप यह देश 'विद्याओं का देश' इस अभिज्ञान से पहचाना जाता रहा है। यहाँ की 'त्रयी विद्या', 'चतुर्दशविद्या' आदि सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हुई हैं। इस देश की आर्ष प्रतिभा प्राचीन काल से ही पवित्र नदी सङ्गमों पर या पर्वतों की गुफाओं में चिन्तन मग्न रही और सम्पूर्ण संसार को ज्ञान-विज्ञान की शेवधि प्रदान किया। अत एव कहा गया है -

'उपह्वरे गिरीणां सङ्गमे च नदीनाम्।
धिया विप्रो अजायत ॥[1]

भारतीय आर्ष मनीषा विना तन्द्रा के एवं विना विभ्रान्ति के अनवरत ज्ञानप्रकाशनार्थ विचरण करती रहती थी जैसे सूर्य निरन्तर प्रकाशमान रहता है। जैसा कि कहा गया है -

'चरन्वै मधु विन्दति-चरन्स्वादुमुदुम्बरम्।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते-चरँश्चरैवेति ॥'[2]

विभिन्न विद्याओं के प्रकाशन में संलग्न ये ऋषि-महर्षि इनके संरक्षण को लेकर भी बहुत सावधान रहते थे। इसीलिए विद्याओं के प्रकाशन के साथ-२ उनके संरक्षण का उपाय भी प्रकाशित किया जाता रहा है। जैसा कि प्रमाणित होता है -

'विद्धा ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेऽहमस्मि।
असूयकायानृजवेऽयताय न मा ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम ॥"[3]

अपि च

यमेव विद्याः शुचिमप्रमत्तं मेधाविनं ब्रह्मचर्योपपन्नम्।
यस्ते न द्रुह्येत् कतमच्चनाह तस्मै मा ब्रूया निधिपाय ब्रह्मन् ॥'[4]

इस प्रकार अनवरत प्रयत्न पूर्वक एवं सावधान मन से मनीषियों ने ज्ञानराशि को संरक्षित कर रखा है जो पुस्तक रूप में या पाण्डुलिपि के रूप में सम्पूर्ण देश में विद्यमान हैं। ज्ञान की प्रकाशक इन पुस्तकों को काशी आदि तीर्थ के समान महत्त्व दिया

१- यजुर्वेद २६।१५, २- ऐतरेयब्राह्मण ३३·३·१५ ३- अप्राप्त वेदशाखा से
४- अप्राप्त वेदशाखा से निरुक्त २।१ एवं सायण ऋग्वेदभाष्यभूमिका में उद्धृत ।

गया है। जैसा कि स्पष्ट होता है -

"पुस्तकञ्च महेशानि यद्गृहे विद्यते सदा।
काश्यादीनि च तीर्थानि सर्वाणि तस्य मन्दिरे॥"१

पाण्डुलिपियों के संरक्षण के प्रति सावधान मनीषियों ने प्रत्येक हस्तलिखित ग्रन्थ में ग्रन्थ की रक्षा के उपाय भी सुझाए हैं जो इस प्रकार हैं -

'तैलाद्रक्षेत् जलाद्रक्षेत् रक्षेत् शिथिलबन्धनात्।
मूर्खहस्ते न दातव्यम् एवं वदति पुस्तकम्॥"2

इस प्रकार विभिन्न आर्षवचनों एवं विद्वानों के कथनों से भारतीय संस्कृत पाण्डुलिपि सम्पदा एवं उसमें विद्यमान ज्ञानराशि के संरक्षण के प्रति आवश्यकसचेष्टता एवं सावधानियों पर प्रकाश पड़ता है। यह संस्कृत पाण्डुलिपि सम्पदा सम्पूर्ण देश एवं विदेशमें भी विद्यमान है जिनके अन्वेषण एवं प्रकाशन की आवश्यकता है। यहाँ शासकीय संस्कृत महाविद्यालय ग्वालियर में विद्यमान संस्कृत पाण्डुलिपियों का विवरण संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है जिसमें नाम, लेखक या पाण्डुलिपिकार का नाम, समय, पत्रों की संख्या एवं पत्रों का आकार-ये जानकारियाँ संकलित की गयी हैं

1- स्त्रीजातक (ज्यौतिष) - पत्रसंख्या 12 आकार 13"×5"
2- ताजिकरत्न (ज्यौतिष) - पत्रसंख्या 24 आकार 10"×7"
3- लघुपाराशरी टीकासहिता (ज्यौतिष) पत्र सं. 8 आकार 11"×6"
4- जीवन्मुक्तावलिः (ज्यौतिष), श्रीकृष्णगुरुविप्रदैवज्ञ, पत्रसं. 27, आकार 7"×6"
5- ताजिकभूषण (भोजनचिन्ताविचाराध्याय) ज्यौतिष, वि.सं. 1924, गणेश द्वारा लिखित, पत्र सं. 95, आकार 8"×6"
6- राममल्लोक्तचक्राणि (ज्यौतिष), राममल्ललिखित, पत्रसं. 28, आकार 10"×4"
7- ज्यौतिषमुहूर्तमञ्जरी (ज्यौतिष) पण्डितयदुनन्दनलिखित, पत्रसं. 15, आकार 10"×4"
8- विष्णुसहस्रनामभाष्य (वैष्णवदर्शन) शङ्कराचार्य, पत्रसं. 41, आकार 13"×6½"
9- रसतरङ्गिणीनौकाटीका (काव्यशास्त्र) गङ्गाराम, पत्रसंख्या 98, आकार 13"×5"
10- ब्राह्मणसर्वस्व (धर्मशास्त्र) हलायुध, पत्रसंख्या 105, आकार 13"×5"
11- मेदिनीकोश (कोश) मेदिनीकर, पत्रसंख्या 178 आकार 11"×6"

१- भूतशुद्धितन्त्र २६/६. 2- पाण्डुलिपियों के समाप्ति पर प्राप्त वचन

12- स्थालीपाकप्रयोग (पाकशास्त्र) गोपालभट्ट शक सं. 1702, पत्र सं. 7, आकार 8'x3"

13- ऋग्वेद पदपाठ प्रथमाष्टक से चतुर्थाष्टक पर्यन्त (वैदिक साहित्य) बालकृष्ण पराडकर, झाँसी ग्राम, वि. सं. 1844 शक सं. 1745, पत्र संख्या 457, आकार 9"x3½"

14- ऋग्वेद पदपाठ पञ्चमाष्टक से दशमाष्टक पर्यन्त (वैदिक साहित्य) बालकृष्ण पराडकर, झाँसी ग्राम, वि. सं. 1844 शक सं. 1745 पत्र संख्या 306, आकार 11"x3½"

15- शाकल संहिता पदपाठ (वैदिक साहित्य) जगन्नाथ भट्ट गोलवलकर, सं. 1836, पत्र संख्या 973, आकार 9"x3½

16- ग्रहलाघव (ज्योतिष), गणेशदैवज्ञ, लिपिकार गोपालोपाध्याय, शक सं. 1912, पत्र सं. 21, आकार 8"x4"

17- अनन्तव्रतकथा (धर्मशास्त्र) पत्र संख्या 09, आकार 7"x4"

18- वास्तुशान्ति (धर्मशास्त्र) आकार 7"x4"

19- समावर्तनप्रयोग (धर्मशास्त्र) आकार 9"x4"

20- विष्णुसहस्रनाम (स्तोत्र) सं. 1922 शक 1787, पत्र संख्या 11, आकार 8"x4"

21- सूतना विधान (तन्त्र) पत्र संख्या 06, आकार 9"x4"

22- वृषोत्सर्ग (धर्मशास्त्र) सं. 1854, पत्र संख्या 12, आकार 9"x3½, रचनाकार रामचन्द्र।

23- लिङ्गप्रतिष्ठा (धर्मशास्त्र) पत्र संख्या 08, आकार 8"x4"

24- शिवप्रतिष्ठा (धर्मशास्त्र) पत्र संख्या 16, आकार 8"x4"

25- शान्तिपाठ (वेद) संवत 1940, पत्र संख्या 14, आकार 8"x4"

26- सौमवारव्रतकथा (धर्मशास्त्र) सं. 1851, पत्र संख्या 23, आकार 6"x3"

27- विष्णुसहस्रनाम (स्तोत्र) पत्र संख्या 26, आकार 8"x4"

28- कोकिलाव्रतपूजा (धर्मशास्त्र) पत्र संख्या 13, आकार 8"x4"

29- अद्भुतशान्तयः (धर्मशास्त्र) पत्र संख्या 11, आकार 9"x4"

30- व्रतकौस्तुभ (धर्मशास्त्र), कमलाकर, पत्र संख्या 145, आकार 9"x4"

31- प्रयोगरत्न (धर्मशास्त्र), भट्टनारायण, सं. 1894, शक 1759 पत्र संख्या 417 आकार 9"x4"

32- ऐतरेय ब्राह्मण प्रथम पञ्चिका (वैदिकसाहित्य) लिपिकार बलवन्तराय, सं. 1902 पत्र संख्या 43, आकार 9"x4"

33- ऐतरेय ब्राह्मण द्वितीयपञ्चिका (वैदिकसाहित्य) लिपिकार बलवन्तराय, सं. 1902, पत्र संख्या 47, आकार 9"x4"

34- ऐतरेय ब्राह्मण तृतीयपञ्चिका (वैदिकसाहित्य) लिपिकार बलवन्तराय, सं. 1902, पत्र संख्या 46, आकार 9"x4"

35- ऐतरेय ब्राह्मण चतुर्थपञ्चिका (वैदिकसाहित्य) लिपिकार बलवन्तराय, सं. 1902, पत्र संख्या 36, आकार 9"x4"

36. ऐतरेय ब्राह्मण पञ्चम पञ्चिका (वैदिकसाहित्य) पत्रसंख्या 45, आकार 9"x4"
सं. 1902 लिपिकर बलवन्तराय

37. ऐतरेयब्राह्मण सप्तमपञ्चिका (वैदिकसाहित्य) लिपिकार बलवन्तराय, सं. 1902,
पत्रसंख्या 41, आकार 9"x4"

38. ऐतरेयब्राह्मण षष्ठम पञ्चिका (वैदिकसाहित्य) लिपिकार बलवन्तराय, सं. 1902,
पत्रसंख्या 35 आकार 9"x4"

39. ऐतरेयब्राह्मण अष्टमपञ्चिका (वैदिकसाहित्य) लिपिकार बलवन्तराय, सं. 1902,
पत्रसंख्या 31, आकार 9"x4"

40. ऐतरेय आरण्यक (पञ्चम) (वैदिकसाहित्य) लिपिकर बलवन्तराय, सं. 1902,
पत्रसंख्या 72, आकार 9"x4"

41. तुलसीविवाहपूजा (धर्मशास्त्र) गङ्गाधरमयूरकर के पुत्र महादेव, सं. 1962,
पत्रसंख्या 04, आकार 8"x4"

42. ऋषिपञ्चमीपूजा (धर्मशास्त्र) पत्रसं. 04, आकार 8"x4"

43. चतुष्षष्टियोगिनीपूजा (धर्मशास्त्र) महादेवमयूरकर, सं. 1940, पत्रसं. 11,
आकार 6"x4"

44. समावर्तन प्रयोग (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 10 आकार 8"x4"

45. दुर्गासप्तशती (स्तोत्र) पत्रसंख्या 76 आकार 6"x 4"

46. उदकशान्ति (धर्मशास्त्र) ग्रन्थकार नारायणदीक्षितचतुर्धर, लिपिकर्ता
केशव उपाध्याय शक सं. 1789, वि. सं. 1923, पत्रसंख्या 39 आकार 8"x4"

47. श्रावणी (धर्मशास्त्र) शक सं. 1717 वि.सं. 1852, पत्रसंख्या 38, आकार 6"x4½"

48. श्राद्ध सङ्कल्प (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 23, आकार 9"x4"

49. एकाक्षरगणपतिस्तवच (मुद्गलपुराणीय) स्तोत्र साहित्य, पत्रसंख्या 13, आकार
5½"x3½"

50. उपनयन प्रयोग (धर्मशास्त्र) केशवभट्टगोलवलकर, शक 1792, वि.सं. 1927,
पत्रसंख्या 20, आकार 8"x4", लिपिकर दादा कोटीभास्कर

51. उपाङ्गललितापूजा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 04, आकार 8"x3"

52. सिद्धिविनायकपूजा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 15, आकार 7"x4"

53. अनन्तपूजा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 19, आकार 8"x4"

54. हरितालिकापूजा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 03, आकार 9"x4"

55. गणेशचतुर्थीपूजा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 05, आकार 9"x4"

56. मृत्युञ्जयजपविधान (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 02, आकार 8"x4"

57. मृत्युञ्जयजपविधान (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 04, आकार 9"x4"

58. भोजप्रबन्ध (काव्य) बल्लालपण्डित, पत्रसंख्या 43 आकार 13"×6"
59. विष्णु प्रतिष्ठा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 48, आकार 8"×4"
60. कोकिलाव्रतोद्यापनविधि (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 23, आकार 5½"×3½"
61. मङ्गलगौरीपूजा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 05, आकार 8"×5"
62. श्रीमद्भगवद्गीता (पुराणेतिहास) पत्रसंख्या 59, आकार 5½"×3½"
63. विष्णुसहस्रनाम (स्तोत्र) पत्रसंख्या 11, आकार 8"×4"
64. केदारसहस्रनामस्तोत्र (स्तोत्र) पत्रसंख्या 14, आकार 8"×4½"
65. बलिवैश्वदेव (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 05, आकार 8"×4½"
66. सङ्कल्प (पूजापद्धति) पत्रसंख्या 13, आकार 7"×3½"
67. उत्सर्जन उपाकर्मप्रयोग (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 21, आकार 7"×3½"
68. वैतानिक गृह्यसूत्र (गृह्यसूत्रसाहित्य) पत्रसंख्या 23, आकार 7"×3½"
69. सत्यनारायणव्रतकथा (चार अध्यायवाली एवं स्कन्दपुराण के उल्लेख से रहित) (पूजापद्धति) पत्रसंख्या 18, आकार 8½"×4"
70. रामनवमीपूजा (पूजापद्धति) पत्रसंख्या 02, आकार 5½×4"
71. चाणक्यभाषितनीतिशास्त्रम् (नीति) चाणक्य, पत्रसंख्या 23, आकार 10"×4½"
72. सोमवतीपूजा (कर्मकाण्ड/धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 05, आकार 9"×4"
73. नवान्नविधि (पूजापद्धति) पत्रसंख्या .... आकार 6½"×4"
74. कौस्तुभोक्तसङ्ग्रह (कर्मकाण्ड) आकार 9"×4"
75. प्रयोगरत्न (नारायणभट्ट) धर्मशास्त्र, पत्रसंख्या 47, आकार 9"×9"
76. सत्यनारायण व्रतकथा मराठी अनुवाद सहित सं. 1933
77. सर्वप्रायश्चित्त (धर्मशास्त्र) पत्रसं. 01 पत्राकार
78. ग. धर्मराजमन्त्रजप (धर्मशास्त्र)
79. परिभाषा सर्वानुक्रमणी ग्रन्थ (शाकलसंहिता) चतुर्थ अष्टकपर्यन्त, सं. 1872, शक 1737, पत्रसंख्या 326 आकार 11"×3½"
80. सूक्ष्मचलार्चा (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 09, आकार 6"×3"
81. चरप्रतिष्ठाप्रयोग (पद्माकर दैवज्ञ) ज्यौतिष, शक 1784, सं. 1919, पत्रसंख्या 14, आकार 8"×4"
82. मूर्तिप्रतिष्ठा (धर्मशास्त्र) शक सं. 1800 वि. सं. 1935, पत्रसं. 21, आकार 9"×4"
83. बृहज्जातक (ज्यौतिष) पत्रसंख्या 31 आकार 1"×4"
84. विनायक शान्ति प्रयोग (धर्मशास्त्र) गङ्गाधर आठले, पत्रसंख्या 08 आकार 10"×4"
85. अशौचानिर्णय (धर्मशास्त्र) गोपालमुणगेकर लिपिकार, ग्रन्थकार त्र्यम्बकपण्डित, शक 1705
86. कूष्माण्डहवन, कर्मकाण्ड/धर्मशास्त्र, पत्रसं. 08, आकार 09"×5"

87- मण्डलदेवता (कर्मकाण्ड) शक 1793 वि.सं. 1928, पत्रसंख्या 06, आकार 9"x4"

88. प्रतिष्ठासौरत (कर्मकाण्ड) गागाभट्ट, शक 1789, पत्रसंख्या 70, आकार 9"x4½"

89. दशविधकुण्डगणित (ज्यौतिष/कर्मकाण्ड) पत्रसं. 04, आकार 8"x4"

90. सप्तनाडीचक्र (धर्मशास्त्र) पत्रसं. 06, आकार 10"x4"

91- नृसिंहपरिचर्या (धर्मशास्त्र) पत्रसं. 08, आकार 10x5"

92. पार्वणश्राद्धप्रयोग (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 06, आकार 8½x4½"

93. जननशान्तिसारः (धर्मशास्त्र) दिनकरभट्ट, पत्रसंख्या 25, आकार 8"x4"

94. कोकिलाव्रत (धर्मशास्त्र) सखाराम, पत्रसंख्या 14, आकार 9"x3"

95- पुण्याहवाचन (वेद) पत्रसंख्या 11, आकार 9"x4"

96. अपामार्जनस्तोत्र (स्तोत्रकाव्य) पत्रसंख्या 22, आकार 5"x3"

97- अनङ्गरङ्ग (कामशास्त्र) कल्याणमल्ल, सं. 1241, पत्रसंख्या 16, आकार 9"x4"

98 उत्सर्जनप्रयोग (धर्मशास्त्र) पत्रसंख्या 07, आकार 9½"x4½"

99. मेरुतन्त्र (तन्त्रशास्त्र) पत्रसंख्या 85, आकार 9½"x4"

100- गृहभरव (कर्मकाण्ड) पत्रसंख्या 18, आकार 9½"x4"

101- उत्सर्जनप्रयोग (कर्मकाण्ड) भाऊभट्ट गोरीभास्कर, शक 1780, पत्रसंख्या 26
आकार 9½"x4½"

102. शिवमहिम्नस्तोत्रटीका (स्तोत्रकाव्यटीका) श्रीधर, सं. 1883, पत्रसं. 16,
आकार 9½"x4"

103. प्रयोगरत्न (कर्मकाण्ड) ग्रन्थकार भट्टनारायण, लिपिकार सखाराम, शक
1797, पत्रसंख्या 191, आकार 10"x5"

104- लीलावती (भास्कराचार्य) पत्रसंख्या 38 आकार 10"x5"

105- कुण्डमार्तण्ड (धर्मशास्त्र) शक 1744

106. संस्कारकौस्तुभ (धर्मशास्त्र) अनन्तदेव, पत्रसं. 40, आकार 10"x5"

107- ऋक् अनुक्रमणी प्रथमाष्टक (वैदिकसाहित्य) गोपालभट्ट हर्षे, सं. 1830,
पत्रसंख्या 132 आकार 8"x4"

108- ऋक् अनुक्रमणी द्वितीयाष्टक (वैदिकसाहित्य) गोपालभट्ट हर्षे, सं. 1830
पत्रसंख्या 139, आकार 8"x4"

109. ऋक् अनुक्रमणी तृतीयाष्टक (वैदिकसाहित्य) गोपालभट्ट हर्षे, सं. 1830,
पत्रसं. 127, आकार 8"x4"

110. ऋक् अनुक्रमणी चतुर्थाष्टक (वैदिक साहित्य) गोपालभट्ट हर्षे, सं. 1830,
पत्रसंख्या 133 आकार 8"x4"

111. निरुक्त पूर्वषट्क (यास्क) काशीभट्टात्मज विट्ठल, शक 1694, पत्रसंख्या 60, आकार 8"x4"

112. पाणिनीय शिक्षा (पाणिनि) प्रभाकरभट्टपुत्र जनार्दन शेवलकर, सं. 1689, पत्र सं. 11 आकार 8"x4"

113. निरुक्त पञ्चम अध्याय (यास्क) प्रभाकरभट्टसूनु जनार्दनभट्टशेवलकर, शक 1689 पत्रसं. 12 आकार 8"x4"

114. अष्टाध्यायी (पाणिनि) पत्रसंख्या 73, आकार 8"x4"

115. निरुक्त पूर्व षट्क (यास्क) शिवराम मराठ, पत्रसं. 96, आकार 8"x4"

116. निरुक्त उत्तर षट्क (यास्क) शिवराम मराठ, पत्रसं. 36, आकार 8"x4"

117. श्रौत सूत्र पूर्व षट्कः (आश्वलायन) बालम्भट्टात्मज सदाशिव, पत्रसं 79, शक 1694, आकार 8"x4"

118. श्रौत सूत्र उत्तरषट्क (आश्वलायन) कोटीभास्कर उपनामक गोपाल-भट्टात्मज मोरेश्वर, पत्रसंख्या 80, आकार 8"x3"

119. वैतानिक गृह्यसूत्र, पत्रसंख्या 38, आकार 8"x4"

120. सर्वानुक्रम (शाकलसंहिता) पत्रसंख्या 51, आकार 8"x4"

121. ऋग्वेद पदपाठ प्रथमाष्टक, शक 1728, पत्रसंख्या 87, आकार 9"x4"

122. ऋग्वेद पदपाठ द्वितीयाष्टक शक 1728, पत्रसंख्या 112, आकार 9"x4"

123. ऋग्वेद पदपाठ तृतीयाष्टक, शक 1728, पत्रसंख्या 86, आकार 9"x4"

124. ऋग्वेद पदपाठ चतुर्थाष्टक, पत्रसंख्या 81, आकार 9"x4"

125. ऋग्वेद पदपाठ पञ्चमाष्टक, शक 1738, पत्रसंख्या 85, आकार 9"x4"

गोविन्द जोशी

126. ऋग्वेद पदपाठ षष्ठाष्टक, गोविन्द जोशी, शक 1738, पत्रसं. 81, आकार 9"x4"

127. ऋग्वेद पदपाठ सप्तमाष्टक, गोविन्द जोशी, शक 1738, पत्रसं. 87, आकार 9"x4"

128. ऋग्वेद पदपाठ अष्टमाष्टक, गोविन्द जोशी, शक 1739, पत्रसंख्या 91 आकार 9"x4"

129. ऐतरेय ब्राह्मण सम्पूर्ण, शक 1735, वि.सं. 1870, पत्रसं. 187, आकार 9"x4"

साहित्य विभागाध्यक्ष
शासकीय संस्कृत महाविद्यालय
ग्वालियर (म.प्र.)

संस्कृत पाण्डुलिपि सम्पदा के संरक्षण हेतु जागरूकता

डॉ. बालकृष्णशर्मा

संस्कृत भाषा में ग्रन्थलेखन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन एवं समृद्ध है। जिस समय मानवसभ्यता का उदय हो रहा था उस समय भारतीय मनीषा ऋषियों के रूप में मन्त्रों के दर्शन कर रही थी और वैदिकसाहित्य की संहिताओं को बना रही थी। इसीलिए मन्त्र प्रसिद्ध है –

उपह्वरे गिरीणां सङ्गमे च नदीनाम्।
धिया विप्रो अजायत ॥१

पूर्व में ग्रन्थों की दो परम्परा प्रचलित थी जो संस्कृतभाषा के अमूल्य ग्रन्थों के संरक्षण में प्रयोग की जाती थी

(१) श्रुतिपरम्परा
(२) स्मृतिपरम्परा

श्रुतिपरम्परा में एक ऋषि अपने ज्ञान को दूसरे ऋषि को सुनाकर सुरक्षित करता था और दूसरा ऋषि तीसरे ऋषि को उस ज्ञान को सुनाता था। इस प्रकार श्रुतिपरम्परा से आर्षज्ञान संरक्षित किया जाता रहा है। श्रुतिपरम्परा से प्राप्त ज्ञानराशि को स्मृति द्वारा सुरक्षित किया जाता रहा है। जिस प्रकार वर्तमान समय में कम्प्यूटर की मेमोरी में ज्ञानराशि को सुरक्षित किया जाता है उसी प्रकार प्राचीनकाल में ऋषि लोग श्रुति एवं स्मृति में ज्ञान की राशि को सुरक्षित रखते थे। इसीलिए भारत में श्रुति एवं स्मृति के रूप में आर्षमनीषा के दर्शन होते हैं। सम्पूर्ण वैदिकसाहित्य श्रुति एवं स्मृति परम्परा से ही संरक्षित होकर वर्तमान समय में हमें प्राप्त हुआ है

श्रुति एवं स्मृति के रूप में प्राप्त ज्ञानराशि को सुरक्षित करने के अन्य उपाय भी परवर्तीकाल में विकसित किये गये जैसे

(१) ग्रन्थपरम्परा
(२) टङ्कणपरम्परा

ग्रन्थपरम्परा में ज्ञानराशि को ताडपत्र, भोजपत्र या अन्य किसी पत्रों पर हाथ से लिखकर एवं उन सभी पत्रों को ग्रथित कर सुरक्षित किया जाता था। इसीलिए इस परम्परा से सुरक्षित की गयी ज्ञानराशि को हम आज ग्रन्थों के रूप में जानते हैं। दूसरी परम्परा टङ्कणपरम्परा थी जिसमें ज्ञानराशि को शिलाखण्डों पर टङ्कित कर सुरक्षित किया जाता था। इन सभी परम्पराओं से संरक्षित

---

१. यजुर्वेद २६।१५

लिखा गया संस्कृत भाषा का विशाल साहित्य हमें प्राप्त हो रहा है। ग्रन्थ परम्परा में कोई विद्वान् अपने मौलिक ज्ञान को ताड या भोज पत्रों पर लिखकर सुरक्षित करता था एवं इन पत्रों को ग्रथित कर देता था जिसे आगे चलकर पाण्डुलिपि कहा जाने लगा। इस प्रकार प्राचीन विद्वानों ने अपने-2 विचारों को लिखकर उनकी पाण्डुलिपियाँ तैयार किया और उसे सुरक्षित किया। परन्तु पाण्डुलिपि के भी लुप्त होने या नष्ट होने का भय रहता था। इसलिए 'पाण्डुलिपि' की प्रतिकृति या नकल हस्तलिखित ग्रन्थों के रूप में की जाने लगी। अर्थात् एक विद्वान् अपने विचारों को 'पाण्डुलिपि' के रूप में सुरक्षित करता था और अन्य विद्वान् 'पाण्डुलिपि' से आवश्यकतानुसार अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार करते थे और सम्पूर्ण देश में इनके माध्यम से पठन-पाठन चलता था।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि जब कोई विद्वान् अपने मौलिक चिन्तन को सार्वजनिक करने एवं आगे की पीढ़ी तक पहुँचाने के लिए स्वयं ताडपत्र या भोजपत्र पर लिख कर ग्रन्थ तैयार करता था तो स्वयं द्वारा प्रथम बार हस्तलिखित प्रति को 'पाण्डुलिपि' कहा जाता था। अन्य विद्वान् आवश्यकतानुसार उस पाण्डुलिपि से हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार करते थे। इस प्रकार पूर्व में ग्रन्थों का पठन-पाठन एवं प्रचार-प्रसार होता था। इससे स्पष्ट होता है कि किसी भी ग्रन्थ की 'पाण्डुलिपि' एक होती थी एवं हस्तलिखित प्रतियाँ अनेक होती थीं। पाण्डुलिपि एवं हस्तलिखित प्रतियों में लिपिकार के प्रमादवश भेद भी हो जाता था जिससे आगे चलकर पाठभेद मिलने लगता था।

पाठभेद से बचाने एवं पाण्डुलिपि की सुरक्षा के अनेक उपाय भी प्राचीनकाल में प्रचलित थे। उदाहरणार्थ पाण्डुलिपि को काष्ठ-फलकों में रखकर लालकपड़े के बस्ते में बाँधकर रखा जाता था। कीटों से सुरक्षा के भी उपाय किये जाते थे। तैल, जल एवं शिथिलबन्ध से भी सुरक्षा का ध्यान रखा जाता था एवं पात व्यक्ति की ही सुरक्षा में 'पाण्डुलिपियों' को रखा जाता था। जैसा कि कहा जाता है—

तैलाद्रक्षेत् जलाद्रक्षेत् रक्षेत् शिथिलबन्धनात्।
मूर्खहस्ते न दातव्यम् एवं वदति पुस्तकम् ॥ १

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि, प्राचीनकाल में जहाँ पाण्डुलिपि एवं हस्तलिखित ग्रन्थों की परम्परा थी वहीं उनके संरक्षण के प्रति लोक में जागरूकता भी थी। वर्तमान समय में भी उन प्राचीन ग्रन्थनिधियों का प्रचार एवं प्रसार होना चाहिए। सर्वप्रथम ऋषियों ने विद्या या ज्ञान के संरक्षण एवं पात्र व्यक्ति को ज्ञान सौंपने विषयक जागरूकता का दर्शन किया। जैसा कि वैदिक मन्त्रों से प्रमाणित होता है –

विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेऽहमस्मि।
असूयकायानृजवेऽयताय न मा ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम् ॥ २

अर्थात् विद्याभिमानी देवता अध्यापक ब्राह्मण के पास गयी और बोली कि मैं तुम्हारी थाती हूँ (निधि हूँ)। मुझे ईर्ष्यालु जन, कुटिल जन एवं असंयमी जन को न देना। ऐसा करने पर मैं फलवती होऊँगी।

इस मन्त्र में ऋषि ने ज्ञान की सुरक्षा के उपाय का वर्णन किया है जिससे प्रमाणित होता है कि प्राचीन काल से ही ऋषि जिस प्रकार वेदों के प्रकाशन में तत्पर रहे हैं उसी प्रकार ज्ञान के संरक्षण के प्रति भी जागरूक रहे हैं। जिससे प्रेरित होकर परवर्ती काल के ग्रन्थकार भी अपने द्वारा रचित ग्रन्थों की पाण्डुलिपियों एवं हस्तलिखित प्रतियों के संरक्षण के प्रति जागरूक रहे हैं। इसका परिणाम यह रहा कि सहस्रों वर्षों के अन्तराल के बाद भी आज हमें हमारे अनेक प्राचीन ग्रन्थ सुरक्षित मिल रहे हैं। वेद, वेदाङ्ग, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, उपवेद, सूत्रग्रन्थ, रामायण, महाभारत, पुराण, न्याय, वैशेषिक, पूर्वमीमांसा, वेदान्त, सांख्य, योग, कामसूत्र, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, स्मृतिसाहित्य, कोश, काव्यशास्त्र एवं काव्यसाहित्य आदि के रूप विद्यमान विशाल संस्कृत साहित्य के प्राचीन ग्रन्थों की वर्तमान में उपलब्धता के मूल में पाण्डुलिपियों एवं हस्तलिखित प्रतियों के संरक्षण के प्रति प्राचीन ऋषियों, विद्वानों एवं आचार्यों की जागरूकता ही है। इस विशाल साहित्य के असङ्ख्य ग्रन्थों के संरक्षण के लिए श्रुतिपरम्परा, स्मृतिपरम्परा, ग्रन्थ-

---

१- हस्तलिखित प्रतियों की समाप्ति पर निर्दिष्ट वचन। २- ऋग्वेद

परम्परा, उत्कीर्णलिपिपरम्परा, पाण्डुलिपिपरम्परा एवं हस्तलिखित ग्रन्थ-परम्परा का ही योगदान है जिसके कारण आज हमें उपर्युक्त साहित्य प्राप्त होता है।

प्राचीन काल में भारत में अनेक विश्वविद्यालय चलाये जाते थे जिनमें देश-विदेश से विद्यार्थी आकर विभिन्न शास्त्रों का गुरुमुख से अध्ययन करते थे। इन विश्वविद्यालयों में तक्षशिला विश्वविद्यालय, नालन्दा विश्वविद्यालय, विक्रमशिला विश्वविद्यालय, पद्मावती-विश्वविद्यालय आदि विशेष विख्यात रहे हैं; इन विश्वविद्यालयों में संस्कृत की पाण्डुलिपियों, हस्तलिखित पोथियों एवं ग्रन्थों के संरक्षण की सुन्दर व्यवस्था रहती थी। इसी प्रकार उस समय के शासकों या राजाओं के द्वारा भी पुस्तकालय एवं विद्यालय चलाये जाते थे जिनमें संस्कृत के सहस्रों ग्रन्थों, पाण्डुलिपियों एवं हस्तलिखित पोथियों को संरक्षित किया जाता था। राजा के पुस्तकालय 'राजप्रासाद' के ही एक अङ्ग हुआ करते थे। इनका विकास राजा द्वारा स्वयं एवं उनके सभापण्डितों के द्वारा किया जाता था। इसकी पुष्टि सभी प्राचीन राजाओं की सभा में संस्कृत विद्वानों के पाये जाने से भी होती है। इन राजाओं की सभा में मन्त्री, विद्वान्, कवि, पण्डित, पुरोहित एवं शास्त्रवेत्ता रहते थे जो राजा के पुस्तकालय का संवर्द्धन एवं संरक्षण करते थे। इसके अतिरिक्त प्राचीन समय में अनेक विद्वान भी पुस्तकालय बनाकर उसका संरक्षण एवं संवर्द्धन करते थे। जो ग्रन्थ जिस विद्वान के पास या जिस पुस्तकालय में मिलता था उसको वहीं जाकर लोग पढ़ते थे और अध्ययन के पश्चात् उसका प्रचार-प्रसार करते थे। पाण्डुलिपि को देखकर विद्वान् अध्येता अपने लिए स्वयं हस्तलिखित प्रति बना लेते थे अथवा हस्तलिखित प्रतिलिपि बनाकर रखने वाले लोग होते थे जिनसे इच्छुक व्यक्ति पोथी प्राप्त कर सकता था। हस्तलिखित पोथी में उस लिपिकर्ता का नाम, कुल एवं परिचय आदि तथा लिपि करने के समय आदि का उल्लेख रहता था। यदि किसी राजा के आदेश से

परम्परा, उत्कीर्णनपरम्परा, पाण्डुलिपिपरम्परा एवं हस्तलिखित ग्रन्थ-परम्परा का ही योगदान है जिसके कारण आज हमें उपर्युक्त साहित्य प्राप्त होता है।

प्राचीन काल में भारत में अनेक विश्वविद्यालय चलाये जाते थे जिनमें देश-विदेश से विद्यार्थी आकर विभिन्न शास्त्रों का गुरुकुल से अध्ययन करते थे। इन विश्वविद्यालयों में 'तक्षशिला' विश्व-विद्यालय, नालन्दाविश्वविद्यालय, विक्रमशिला विश्वविद्यालय, पद्मावती-विश्वविद्यालय आदि विशेष विख्यात रहे हैं। इन विश्वविद्यालयों में संस्कृत की पाण्डुलिपियों, हस्तलिखित पोथियों एवं ग्रन्थों के संरक्षण की सुन्दर व्यवस्था रहती थी। इसीप्रकार उस समय के शासकों या राजाओं के द्वारा भी पुस्तकालय एवं विद्यालय चलाये जाते थे जिनमें संस्कृत के सहस्रों ग्रन्थों, पाण्डुलिपियों एवं हस्तलिखित पोथियों को संरक्षित किया जाता था। ये पुस्तकालय 'राजप्रासाद' के ही एक अङ्ग हुआ करते थे। इनका विकास राजा द्वारा स्वयं एवं उनके सभापण्डितों के द्वारा किया जाता था। इसकी पुष्टि सभी प्राचीन राजाओं की सभा में संस्कृत विद्वानों के पाये जाने से भी होती है। इन राजाओं की सभा में मन्त्री, विद्वान, कवि, पण्डित, पुरोहित एवं शास्त्रवेत्ता रहते थे जो राजा के पुस्तकालय का संवर्द्धन एवं संरक्षण करते थे। इसके अतिरिक्त प्राचीन समय में अनेक विद्वान भी पुस्तकालय बनाकर उसका संरक्षण एवं संवर्द्धन करते थे। जो ग्रन्थ जिस विद्वान के पास या जिस पुस्तकालय में मिलता था उसको वहीं जाकर लोग पढ़ते थे और अध्ययन के पश्चात् उसका प्रचार प्रसार करते थे। पाण्डुलिपि को देखकर विद्वान् अध्येता अपने लिए स्वयं हस्तलिखित प्रति बना लेते थे अथवा हस्तलिखित प्रतिलिपि बनाकर रखने वाले लोग होते थे जिनसे इच्छुक व्यक्ति पोथी प्राप्त कर सकता था। हस्तलिखित पोथी में उस लिपिकर्ता का नाम, कुल एवं परिचय आदि तथा लिपि करने के समय आदि का उल्लेख रहता था। यदि किसी राजा के आदेश से

प्रतिलिपि की जाती थी तो उसका भी उल्लेख किया जाता था। पाण्डुलिपि एवं हस्तलिखित ग्रन्थों के लिखने के लिए उस समय में प्रचलित अनेक लिपियों का आश्रयण किया जाता था। उदाहरणार्थ प्राचीन समय में भारत में शारदा लिपि, खरोष्ठी लिपि, ब्राह्मी लिपि, गुप्त लिपि, कुटिल लिपि एवं देवनागरी लिपि आदि में पाण्डुलिपियाँ या हस्तलिखित पोथियाँ प्राप्त होती हैं। आज भी भारत एवं विश्व के अनेक पुस्तकालयों में संस्कृत की लाखों पाण्डुलिपियाँ या हस्तलिखित प्रतियाँ अपने जीर्णोद्धारकर्ता की बाट देख रही हैं। भारत में तंजौर पुस्तकालय, बड़ौदा पुस्तकालय, सरस्वतीभवन पुस्तकालय, अड्यार पुस्तकालय आदि अनेकों ऐसे पुस्तकालय हैं जिनमें बड़ी संख्या में पाण्डुलिपियाँ एवं हस्तलिखित प्रतियाँ संरक्षित हैं जिनका प्रकाशन किया जाना है; इसी प्रकार जर्मनी की बर्लिन लाइब्रेरी में संस्कृत की 40,000 हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ एवं लन्दन की 'इण्डिया हाउस' लाइब्रेरी में 30,000 हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ विद्यमान हैं जिनका प्रकाशन होना चाहिए।[1] अनेक पुस्तकालयों में रखी पाण्डुलिपियों या हस्तलिखित पोथियों के सूचीपत्र भी वर्तमान में तैयार किये गये हैं जिनसे पाण्डुलिपियों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मध्यप्रदेश में सिन्धिया प्राच्य विद्या संस्थान उज्जैन, डॉ. हरी सिंह केन्द्रीय विश्वविद्यालय सागर एवं प्राचीन राजभवनों में पाण्डुलिपियाँ सङ्गृहीत एवं संरक्षित हैं जिनका प्रकाशन किया जाना चाहिए।

वस्तुतः देश की अनेक सम्पदाओं में एक महत्वपूर्ण सम्पदा पाण्डुलिपि एवं हस्तलिखित ग्रन्थ हैं जिन्हें हम बौद्धिक सम्पदा कह सकते हैं। भारत सरकार इस बौद्धिक सम्पदा के संरक्षण के लिए पाण्डुलिपि मिशन चला रही है जिसके अन्तर्गत देश के विभिन्न अंगों में इसके केन्द्र खोले गये हैं जो पाण्डुलिपियों का सङ्ग्रह एवं संरक्षण कर रहे हैं। वर्तमान वैज्ञानिक युग में कम्प्यूटर के आविष्कार हो जाने से पाण्डुलिपि संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये जा रहे हैं। जिसके अन्तर्गत देश के कोने-कोने से पाण्डुलिपियों का अन्वेषण कर उनका

1- वैदिक साहित्य (पं. रामगोविन्द त्रिवेदी) पृ. 43

संग्रह किया जा रहा है और देश की इस बौद्धिक सम्पदा को बचाया जा रहा है। वर्तमान में ये पाण्डुलिपियाँ कई प्रकार से अप्राप्य हो रही हैं। उदाहरणार्थ नष्ट हो जाने से, नदी आदि में प्रवाहित कर दिये जाने से, विदेशियों द्वारा उठा ले जाने से एवं लोक में जागरूकता के अभाव से ये अमूल्य पाण्डुलिपियाँ जो प्राचीन संस्कृत साहित्य की निधियाँ हैं, आज हमारे लिए अप्राप्य होती जा रही हैं। अतः यह हमारा पावन कर्तव्य है कि हम इन पाण्डुलिपियों के संरक्षण हेतु लोक में चेतना एवं जागरूकता पैदा कर ऋषि ऋण का मोचन करें।

साहित्य विभागाध्यक्ष
शासकीय संस्कृत महाविद्यालय
ग्वालियर (म.प्र.)